DAILY NEWS BULLETIN

LEADING HEALTH, POPULATION AND FAMILY WELFARE STORIES OF THE Day Tuesday **202601020**

Route mental health care through communities

HT

In recent decades, many countries have made meaningful progress in developing community-based mental health services. Moreover, rights-based approaches have gained traction as people with lived experience increasingly have a voice in shaping mental health policy and services. These developments have shown that people living with mental health conditions can flourish in their communities when given the right support.

Yet, around the world, very large numbers of people with mental health conditions live behind closed doors in psychiatric hospitals and social care institutions. Some have been there for months; others for decades. According to the World Health Organization's *Mental Health Atlas*, about half were brought in against their will, stripped of basic daily choices like what to wear or when to eat, and cut off from the outside world.



Anura Kumara Dissanayake



Tedros Adhanom Ghebreyesus

We think of institutional mental health care as an outdated model. But it is far more than that. It is a human rights issue hiding in plain sight. Many countries still rely heavily on standalone psychiatric institutions. Across the world, we estimate that nearly half of all public mental health funding is spent on maintaining these large facilities, while access to community-based mental health care, including in general hospitals, for millions of people remains underfunded and overlooked.

Sri Lanka embraced mental health care reform by replacing isolated institutions with community-based services. Guided by the country's mental health policies over the past 20 years, Sri Lanka has made significant progress in transforming the mental health system from an asylum-based model to a decentralised network of district and community services. Today, mental health care in Sri Lanka is delivered through inpatient and outpatient units in general hospitals, outreach clinics, intermediate rehabilitation units, and child mental health clinics throughout the country.

Facilities that uphold human rights, dignity, and personal autonomy promote recovery. However, when care is characterised by coercion, rigid control, or social isolation, it risks becoming a form of confinement rather than care.

Deinstitutionalisation is not simply about reducing hospital beds. It is about creating the conditions for people to live independently and participate fully in society, with access to appropriate housing, education, employment, social protection, and person-centred mental and physical health care. This is the foundation of recovery, inclusion and human rights-based mental health care.

Scaling back psychiatric hospital beds must go hand in hand with building up local services and practical supports — housing, community mental health care, peer support, social connection, education and employment, legal support, and support for families. No one should be discharged without continuity of care. People should be welcomed into services and communities that are ready for them.

Countries worldwide are proving that advancing deinstitutionalisation is achievable across all income levels, from changing care practices and expanding alternatives to psychiatric hospitals to establishing comprehensive networks of community-based services. Deinstitutionalisation is a cultural shift that requires the meaningful involvement of people with lived experience, health service providers, and the whole of society.

To support this transition, the World Health Organization has released new, practical guidance to help health leaders navigate each step. Every country begins from a different position, with different resources, laws, service systems and community networks. Implementers need to identify feasible, high-impact actions that are appropriate to their own context.

We must ensure that people receive the support they need in environments that promote dignity, autonomy, relationships and inclusion. We call on governments, health and social care systems to make this a priority, with people with lived experience as partners throughout the transition.

Anura Kumara Dissanayake is President, Sri Lanka, and Tedros Adhanom Ghebreyesus is director-general, the World Health Organization. The views expressed are personal

...ai, Cochin, Goa, Hyderabad, Khajuraho, Mumbai, Trivandrum, Visakhapatnam, Vijayawada and beyond by Rail or Road - Rs. 30/-
...n Vihar, Greater Noida, ...

बार-बार दवाएं लेने से मिलेगी निजात, कैंसर मरीजों को भी राहत

डायबिटीज मरीजों के लिए अब तीन दवाओं को मिलाकर सिर्फ 1 टैबलेट

हिमांशु अरविंद मिश्र

नई दिल्ली। डायबिटिक मरीजों के लिए अब बार-बार या अलग-अलग दवाएं खाने की झंझट खत्म होने वाली है। सीडीएससीओ ने तीन दवाओं को मिलाकर बनाई गई एक ही टैबलेट को बाजार में लाने की अनुमति दे दी है। इस एक गोली में डैपाग्लिफ्लोजिन, सिटाग्लिप्टिन और मेटफॉर्मिन हाइड्रोक्लोराइड को मिलाया गया है। टाइप-2 डायबिटीज के जिन मरीजों को ब्लड शुगर कंट्रोल करने के लिए अलग-अलग समय पर कई गोलियां खानी पड़ती थीं, उन्हें अब केवल यह एक गोली खानी होगी। इससे मरीजों के लिए दवा का डोज़ मिस होने की संभावना बेहद कम हो जाएगी। इसके अलावा सीडीएससीओ ने कैंसर-एडीएचडी मरीजों को भी दवाओं के मामले में राहत दी है।

दरअसल डायबिटीज के कई गंभीर मरीजों को दिनभर में 3 से 4 अलग-अलग गोलियां खानी पड़ती हैं। अब उन्हें सुबह या शाम को सिर्फ यही एक सिंगल गोली खानी होगी। अक्सर देखा गया है कि जो मरीज



कई सारी दवाएं खाते हैं, वे भूलवश कोई न कोई खुराक छोड़ देते हैं। सिंगल गोली होने से दवा छूटने की संभावना न के बराबर हो जाएगी, जिससे शुगर लेवल हमेशा मेंटेन रहेगा। अलग-अलग तीन दवाइयां खरीदने के मुकाबले इस तरह की कॉम्बिनेशन टैबलेट आमतौर पर मरीजों को थोड़ी सस्ती पड़ती है।

दिल और किडनी को भी सुरक्षा : डैपाग्लिफ्लोजिन जैसी दवाएं न सिर्फ शुगर कंट्रोल करती हैं, बल्कि यह दिल और किडनी को भी सुरक्षा प्रदान करती हैं। यह दवा केवल टाइप-2 डायबिटीज के वयस्क मरीजों के लिए ही मंजूर की गई है। यह उन मरीजों को दी जाएगी जिनका ब्लड शुगर लेवल किसी एक या दो दवाओं से पूरी तरह कंट्रोल में नहीं आ पा रहा है और डॉक्टरों को तीन दवाओं की थेरेपी की जरूरत महसूस हो रही है।

कैंसर के मरीजों को दवाओं का नया विकल्प : सीडीएससीओ की कैंसर विशेषज्ञ समिति ने निवोलुमैब दवा के इस्तेमाल का दायरा बढ़ाने की सिफारिश की है। प्रस्ताव के मुताबिक, इस दवा को 12 साल और उससे अधिक उम्र के बच्चों और वयस्कों में तीसरे या चौथे चरण के हॉजकिन लिंफोमा के इलाज में इस्तेमाल किया जा सकेगा। यह उन मरीजों के लिए है, जिन्हें पहले इलाज नहीं मिला है। दवा को अकेले नहीं, बल्कि चार दूसरी दवाओं के साथ देने का प्रस्ताव है।

- हॉजकिन लिंफोमा एक तरह का कैंसर है, जो शरीर की रोगों से लड़ने वाली लसीका प्रणाली को प्रभावित करता है। बीमारी किस चरण में है, इसके आधार पर इलाज तय किया जाता है। समिति 12 से 18 साल के भारतीय बच्चों में दवा की सुरक्षा को लेकर और जानकारी जुटाने के लिए अध्ययन भी कराएगा।

बच्चों को गोली की जगह पीने का घोल : सीडीएससीओ ने एडीएचडी यानी ध्यान लगाने और अपनी गतिविधियों पर नियंत्रण रखने में परेशानी से जुड़ी स्थिति के इलाज में इस्तेमाल होने वाली एटोमॉक्सेटीन दवा का पीने वाला घोल भी मंजूर किया है। इसकी मात्रा 4 मिलीग्राम प्रति मिलीलीटर है। इसका इस्तेमाल छह साल या उससे अधिक उम्र के बच्चों, किशोरों और वयस्कों में किया जाता है।

रिपोर्ट | जलवायु परिवर्तन और कार्बन डाई ऑक्साइड के बढ़ते स्तर से गेहूं की प्रोटीन संरचना में आ रहा बदलाव, नए अध्ययन में चौंकाने वाला खुलासा हुआ

तेज गर्मी से गेहूं की तासीर बदल रही, रोटी पचानी भी होगी मुश्किल

नई दिल्ली, एजेंसी। जलवायु परिवर्तन और लगातार बढ़ती गर्मी चौंकाने में सिर्फ पसीना नहीं छुड़ाएगी, बल्कि मनुष्यों के लिए गेहूं के आटे से बनी रोटी और अन्य खाद्य पदार्थों को पचा पाना भी मुश्किल कर सकती है। एक नए अध्ययन में यह चौंकाने वाला खुलासा हुआ है।

रिपोर्ट के अनुसार, वातावरण में लगातार बढ़ रहा कार्बन डाई ऑक्साइड का स्तर गेहूं की प्रोटीन संरचना में बदलाव की वजह बन सकता है। जर्मनी में म्यूनिख स्थित टेक्निकल यूनिवर्सिटी के लाइबनिज इंस्टीट्यूट फॉर फूड सिस्टम्स बायोलॉजी के नेतृत्व में यह शोध किया गया है। 'फूड केमिस्ट्री' जर्नल में प्रकाशित अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार, वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड (सीओटू) का बढ़ता स्तर जलवायु पर असर के साथ ही हमारे भोजन को भी प्रभावित कर रहा है। रिपोर्ट के अनुसार, सीओटू का स्तर बढ़ने से गेहूं की पौष्टिकता, प्रोटीन संरचना में बदलाव हो सकते हैं। इसके कारण कुछ साल बाद हमारे लिए गेहूं से बने खाद्य पदार्थ पचा पाना मुश्किल हो सकता है, जोकि एक बड़ी समस्या के रूप में उभरकर सामने आ सकता है।



गेहूं की गुणवत्ता पर विशेष जोर

लाइबनिज इंस्टीट्यूट की प्रमुख शोधकर्ता सबरीना गाइसिंट्ज ने कहा कि इन बदलावों की सीमा काफी हद तक गेहूं की किस्म पर निर्भर करती है। शोधकर्ताओं ने जोर दिया कि अध्ययन के नतीजे ऐसी गेहूं की किस्मों की पहचान और विकसित करने के महत्व को रेखांकित करते हैं, जो सीओटू की बढ़ती सांद्रता के बावजूद अच्छी गुणवत्ता बनाए रखें और उनमें ऐसे प्रोटीन कम से कम हों जिन्हें पचाना मुश्किल होगा।

340 पीपीएम या वर्ष 1980 में कार्बन डाई ऑक्साइड का स्तर

425 पीपीएम सीओटू वैश्विक स्तर पर 2024 में दर्ज की गई

600 पीपीएम तक पहुंच सकता है वर्ष 2050 तक यह स्तर

गेहूं की 10 किस्मों पर किया परीक्षण



शोधकर्ताओं ने सर्दियों में उगाई जाने वाली गेहूं की 10 किस्मों की खेती और पर्यावरण की वास्तविक परिस्थितियों में उगाया। इनमें से कुछ को सीओटू की बढ़ी हुई सांद्रता (546 पीपीएम) पर रखा गया, जबकि अन्य को मौजूदा स्तर पर उगाया गया। फसल की कटाई के बाद पता चला कि सीओटू के बढ़े स्तर में उगे गेहूं में एमाइलेज, ट्रिप्सिन इनिबिटर की मात्रा बढ़ गई थी।

44 साल में 25 प्रतिशत बढ़ा सीओटू का स्तर



रिपोर्ट के अनुसार, वैश्विक स्तर पर सीओटू का स्तर वर्ष 1980 में 340 पार्ट्स प्रति मिलियन (पीपीएम) दर्ज किया गया था। 44 साल में यह लगभग 25 प्रतिशत बढ़कर वर्ष 2024 में लगभग 425 पीपीएम हो गया। अनुमान जताया गया है कि वर्ष 2050 तक इसका स्तर 600 पीपीएम तक पहुंच सकता है। इसका अर्थ यह है कि भविष्य में गेहूं सीओटू की अधिक सांद्रता वाले वातावरण में उगेगा।

वायु सेवा शुल्क : मुम्बई एवं अहमदाबाद-₹ 10.00
प्रकाशक समूह महाप्रबंधक द्वारा हिन्दुस्तान मीडिया वेन्चर्स लिमिटेड के पक्ष में 18-20, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित एवं मुद्रक मनहर बापूर द्वारा एच टी मीडिया लिमिटेड, फ्लॉट नं.-6, उद्योग विहार, डेटा नोएडा, जिला : गौतमबुद्ध नगर (उत्तर प्रदेश)
प्रधान सम्पादक : [illegible] प्रबंध संपादक : [illegible] दूरभाष : (011) 23361234, सम्पादकीय (011) 66561364, 66561263, प्रसार : (011) 66561111, विज्ञापन (011) 66561442, 66561189, फैक्स : (011)

महिलाओं की कैंसर सर्जरी में खतरे के दो बड़े हिस्सों की पहचान

- सर्जरी को अधिक सुरक्षित बनाने की दिशा में एम्स के डाक्टरों की महत्वपूर्ण खोज
- सर्जन को आपरेशन के दौरान रक्तस्राव और महत्वपूर्ण अंगों को चोट से बचाने में मदद मिलेगी

जागरण संवाददाता, नई दिल्ली: महिलाओं में कैंसर की जटिल सर्जरी को अधिक सुरक्षित और प्रभावी बनाने की दिशा में एम्स के डाक्टरों ने महत्वपूर्ण खोज की है। एम्स सर्जिकल आंकोलाजी विभाग के प्रोफेसर डा. एमडी रे और उनकी टीम ने शरीर में दो ऐसे संवेदनशील हिस्सों की पहचान की है, जहां आपरेशन में अधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है। इनकी गर्भाशय मुख, गर्भाशय और अंडाशय के कैंसर के लिए की गई 255 रेडिकल या माडिफाइड रेडिकल हिस्टेरेक्टमी सर्जरी के अध्ययन के बाद पहचान की गई। रक्तस्राव और अंगों को चोट पहुंचने के कारणों का विश्लेषण किया गया। इसके बाद 105 मामलों में सर्जरी की तकनीक में बदलाव किया गया। इससे सर्जनों को आपरेशन के दौरान रक्तस्राव और महत्वपूर्ण अंगों को चोट से बचाने में मदद मिलेगी और इलाज करने में भी काफी आसानी होगी।

पेशाब की नली और नसों को बचाने में मदद: डा. एमडी रे के अनुसार पहली पहचान गर्भाशय की प्रमुख रक्त वाहिकाओं के ठीक नीचे श्रोणि (पेल्विस) की गई है। यहां पर गुर्दे से मूत्राशय तक पेशाब पहुंचाने वाली नली (यूरेटर), मूत्राशय, श्रोणि की नसें और महत्वपूर्ण रक्त वाहिकाएं एक-दूसरे के बेहद करीब होती हैं। यहां जरा सी चोट लगने से अधिक रक्तस्राव, पेशाब संबंधी समस्याएं और फिस्टुला का खतरा रहता है। सर्जरी के दौरान खून की नसों को एक-एक करके बांधने पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। इससे खून बहने और पेशाब की नली या आसपास के अंगों को चोट लगने का खतरा कम होगा।

लिवर के पास भी खतरनाक हिस्से की पहचान: डा. एमडी रे ने बताया कि दूसरा हिस्सा लिवर के पास होता है, इसे 'रेज हेपेटोकैवल ट्राएंगल' नाम दिया गया है। लिवर को आसपास के टिश्यू से अलग करने या उसे हटाने के दौरान यहां बड़ी रक्त वाहिकाओं को चोट लगने से गंभीर रक्तस्राव हो सकता है। इन दोनों हिस्सों की पहचान का उद्देश्य सर्जनों को आपरेशन के दौरान जोखिम वाले स्थानों के प्रति पहले से सचेत करना है। इससे सर्जरी में सटीकता बढ़ाने, महत्वपूर्ण अंगों और नसों को सुरक्षित रखने तथा मरीजों की रिकवरी और जीवन गुणवत्ता बेहतर करने में मदद मिल सकती है।

गर्भाशय के भीतर और बाहर एक साथ विकसित हुआ गर्भ, 11वें सप्ताह में फटी फेलोपियन ट्यूब

- आइवीएफ से गर्भधारण के बाद सामने आई दुर्लभ जटिलता
- आपातकालीन सर्जरी कर डाक्टरों ने बचाई महिला की जान

जागरण संवाददाता, गुरुग्राम: आइवीएफ से गर्भधारण के बाद 11 सप्ताह तक सब सामान्य लग रहा था, लेकिन गर्भाशय के बाहर विकसित हो रहे गर्भ ने महिला की जान संकट में डाल दी। गुरुग्राम के आर्टेमिस अस्पताल में 32 वर्षीय महिला की फेलोपियन ट्यूब फटने से पेट में करीब 800 मिलीलीटर खून और उसके थक्के जमा हो गए। डाक्टरों ने आपातकालीन सर्जरी कर फटी ट्यूब हटाई और गर्भाशय में पल रहे गर्भ को सुरक्षित रखने में सफलता हासिल की।

यह मामला हेटेरोटोपिक प्रेग्नेंसी का था। इसमें गर्भाशय के भीतर और बाहर एक साथ गर्भ विकसित होता है। इसकी चुनौती यह है कि गर्भाशय के भीतर गर्भ की पुष्टि होने के बाद गर्भाशय के बाहर गर्भ होने की आशंका पर ध्यान कम हो सकता है। आइवीएफ से गर्भधारण करने वाली महिलाओं में इस दुर्लभ स्थिति की आशंका सामान्य गर्भधारण की तुलना में अधिक रहती है। अस्पताल की स्त्री रोग एवं प्रसूति विभाग की अध्यक्ष डा. रेनू सहगल के अनुसार फैलोपियन ट्यूब फटने पर अत्यधिक रक्तस्राव हो सकता है और सर्जरी जरूरी होती है। एंडोमेट्रियोसिस के कारण बने चिपकाव से प्रभावित ट्यूब की पहचान करना भी कठिन था।

यह कि ये घटनाक्रम ऐसे समय जान के आरोप लगे हैं। सवार होकर आए और

मात्र दूध पीने भर से मजबूत नहीं होंगी हड्डियां, 30 की उम्र तक रखें खास ध्यान

आस्टियोपोरोसिस दिवस विशेष

अनूप कुमार सिंह • जागरण

नई दिल्ली : हड्डियों की मजबूती की चिंता अक्सर तब होती है, जब वे कमजोर होने लगती हैं या फिर मामूली चोट और गिरने भर से फ्रैक्चर हो जाता है। आस्टियोपोरोसिस में हड्डियां धीरे-धीरे कमजोर और खोखली होने लगती हैं, आरंभिक अवस्था में इसके लक्षण स्पष्ट नहीं होते। विशेषज्ञों का परामर्श है कि हड्डियों को मजबूत बनाए रखने के लिए बचपन और किशोरावस्था से ही सही खानपान व सक्रिय जीवनशैली अपनाना आवश्यक है, तभी हड्डिया उम्र भर मजबूत से आपका साथ देती रहेंगी। पर, इसके लिए केवल दूध पीना पर्याप्त नहीं है, बल्कि कैल्शियम के साथ प्रोटीन और विटामिन डी भी आवश्यक हैं।

> हड्डियों की मजबूती की नींव बचपन में ही पड़ती है। पर्याप्त कैल्शियम, प्रोटीन और विटामिन डी के साथ नियमित शारीरिक गतिविधियां जरूरी हैं। इससे आस्टियोपोरोसिस का खतरा कम करने में मदद मिल सकती है। **डा. यश गुलाटी**, वरिष्ठ सलाहकार, हड्डी रोग विभाग, इंद्रप्रस्थ अपोलो अस्पताल
>
> दूध कैल्शियम का अच्छा स्रोत है, लेकिन हड्डियों को स्वस्थ रखने के लिए सिर्फ इसी पर निर्भर रहना सही नहीं है। संतुलित आहार, पर्याप्त प्रोटीन, विटामिन डी और नियमित व्यायाम भी जरूरी हैं। **डा. गौरव शर्मा**, विभागाध्यक्ष, हड्डी रोग विभाग, स्वामी दयानंद अस्पताल

30 की उम्र तक हड्डियों की मजबूती पर दें ध्यान : बचपन और किशोरावस्था में हड्डियों का तेजी से विकास होता है। युवावस्था में हड्डियां अपनी अधिकतम मजबूती हासिल करती हैं। 30 वर्ष की उम्र तक हड्डियों के विकास और मजबूती पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। यह हड्डियों का बेहतर विकास भविष्य में आस्टियोपोरोसिस का खतरा कम करने में मदद करता है। उम्र बढ़ने के साथ हड्डियों का घनत्व घटता है। महिलाओं में मेनोपाज के बाद यह प्रक्रिया तेज हो जाती है।

थाली में शामिल करें कैल्शियम और प्रोटीन : दूध, दही, पनीर, रागी, दालें और हरी पत्तेदार सब्जियां कैल्शियम के अच्छे स्रोत हैं। दाल, दूध-दही, पनीर और सोया जैसे खाद्य पदार्थों से पर्याप्त प्रोटीन भी मिलता है। विटामिन डी शरीर को कैल्शियम के अवशोषण में मदद करता है। इसके लिए उचित धूप और संतुलित खानपान पर ध्यान देना चाहिए।

लंबे समय तक बैठे रहना, शारीरिक गतिविधियों की कमी, डाइटिंग और धूम्रपान हड्डियों की सेहत को नुकसान पहुंचाते हैं।

2.0, PLI and the Semiconductor

15th Finance Commission

Parental consent makes right to internet conditional



VIKRAM RAJ

THE SUPREME Court's October 15 order has been read, rightly, as a defeat for the social media ban. Justices J B Pardiwala and K Vinod Chandran held that access to the internet is a fundamental right that children share "irrespective of their age", that a blanket restriction is no answer, and that keeping children offline because platforms fail to remove abuse material "would be to mistake the victim for the problem". Having spent months arguing against Karnataka's under-16 proposal, we can take the win. But look at what the order, and everything around it, quietly agrees on.

On September 28, a bench led by the CJI heard a second petition by the same alliance. It asked the Centre to examine whether anyone under 18 should need a parent's consent to open an account, and the Solicitor General said the Data Protection law's parental-consent model could be adopted in some other law to do it. The Pardiwala bench recommended "parental consent, guidance and oversight" with a dedicated child mode. The petitioner wants it, the government wants it, both benches want it.

The Data Protection Rules say a platform may not process a child's data without verifiable consent from a parent, and that it must confirm the parent is an adult using "reliable details of identity and age", with a government-notified digital locker as one route. For every user who is a child, an adult must then produce government-grade proof of who they are and how old they are. The platform keeps enough to prove it did this, and the child's account is tethered to a named adult's identity record for good.

Read the Pardiwala order's own warning against that. Age-based restrictions, the bench wrote, "inevitably, always require identifying and ascertaining the age of each and every user, continuous collection and monitoring of sensitive data and an overall disproportionate risk of misuse and surveillance". Every word applies to parental consent as the Rules define it. The only difference from a ban is that the child gets in, once an adult has been identified on her behalf. Family mediation deepens inequalities where the household already controls the device, and ASER 2024 shows rural girls of 14 to 16 already own fewer phones and use social media less than boys. A consent regime makes the father the platform's compliance officer. For a girl in a conservative home, a queer teenager, a child being abused by the very adult who holds the Aadhaar, "parental oversight" is not a safeguard. It is the problem with a legal mandate behind it. Platforms can live with this, and the state gets a verified identity layer without ever having to pass a law that says so. And the people it costs, children and the adults tied to their accounts, were never in the room.

A consent regime makes the father the platform's compliance officer. For a girl in a conservative home, a queer teenager, a child being abused by the very adult who holds the Aadhaar, 'parental oversight' is not a safeguard

The order leaves a harder route open, which is why nobody has taken it. The bench named it in passing, accounts private by default, no contact from unknown adults, controls on advertising to children. These are obligations on the platform, which the Centre can impose under the IT Rules. Where age must be known at all, the check can return one bit, over or under, and nothing else. And the court has asked the Centre to report on what tools platforms actually use to detect and remove abuse material. That report is the test. If the answer is thin, the remedy is penalties for the platform, not papers from the parent.

The writer is associated with Internet Freedom Foundation